समान नागरिक संहिता : हिन्दू-हित या चुनावी प्रपंच ?

उचित होगा कि संविधान के अनु. 30 के दायरे में देश के सभी समुदाय और हिस्से सम्मिलित किये जाएं।" वह मात्र एक पृष्ठ का, किन्तु अत्यंत मूल्यवान विधेयक था। यदि वही विधेयक हू-ब-हू फिर लाकर पास कर दिया जाए, तो राष्ट्रीय हित के लिए एक बड़ा काम हो जाएगा। उस की तुलना में हिन्दुओं के लिए महत्वहीन 'समान नागरिक संहिता' को आज उठाना केवल सांप्रदायिक तनाव उभारने का नुस्खा है। उस से किन्हीं दलों को चुनावी लाभ-हानि भले हो जाए, देश-हित घूरे पर ही पड़ा रहेगा।

हिन्दू समाज पिछले हजार सालों से एक सभ्यतागत युद्ध झेल रहा है। भाजपा-परिवार इस से बखूबी परिचित है। बल्कि इस तथ्य का इस्तेमाल कर, यानी हिन्दुओं को डरा कर ही सत्ता में आया है। लेकिन सत्ता में आने पर इस की प्रवृत्ति केवल सत्ता में बने रहने की जुगत भर रही है। यह कई दशकों का अनुभव है। अत: गुजरात चुनाव के समय समान नागरिक संहिता का मुद्दा उठाना एक प्रपंच लगता है। उसी तरह, 'बिगड़ती जनसांख्यिकी' का मुद्दा भी हिन्दुओं को डराने की तिकड़म ही है।

क्योंकि जनसंख्या-नियंत्रण तथा समान नागरिक संहिता मूलत: हिन्दू और मुस्लिम समुदायों के बीच ताकत का मामला है। जबकि हिन्दू समाज अपने स्कूलों और मंदिरों पर समान अधिकार से भी वंचित हैं। इस तरह, मुसलमानों, क्रिश्चियनों की तुलना में हिन्दुओं को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाए रखना हिन्दू समाज के अस्तित्व पर ही चोट है। इस अपमानजनक और अंतत: प्राणघातक अन्याय को जारी रखते हुए, भाजपा-परिवार की हिन्दुत्व वाली सारी भंगिमा निस्संदेह एक प्रपंच मात्र है।

आखिर, समान सागरिक संहिता या जनसंख्या-नियंत्रण जैसे मुद्दे उछालने से मुसलमानों में विरोध पैदा होगा। जिस से हिन्दुओं में प्रतिक्रिया और डर पैदा होगा। जिस का उपयोग भाजपा-परिवार के कार्यकर्ता, और प्रचारक अपना पार्टी-समर्थन पक्का करने में लगाएंगे। इस तरह, वे केवल हर मोर्चे पर केवल विरोध-प्रतिरोध उकसाएंगे, जबकि हिन्दू समाज को मिलेगा कुछ नहीं। उलटे दुनिया में बदनामी होगी कि भारत में मुसलमानों पर जबर्दस्ती हो रही है।

यह भी दर्शनीय है कि पिछले सात दशकों में भाजपा-परिवार ने समान नागरिक संहिता के लिए कभी कोई आंदोलन या हस्तक्षेप नहीं किया। तब भी, जब स्वयं सुप्रीम कोर्ट इस की जरूरत पाँच बार बता चुकी है। यह उस ने 1985, 1995, 2003, और 2011 ई. में विविध मामलों की सुनवाइयों/फैसलों में रेखांकित किया। पर सभी राजनीतिक दल मानो किसी मौन दुरभिसंधि से चुप रहे, जब कि उस के लिए संविधान का निर्देश (अनुच्छेद 44) भी था। अब एकाएक भाजपा नेताओं द्वारा समान नागरिक संहिता उठाना दिखावटी लगता है। आखिर, जिसे बैंगन भूनने में संकोच हो, वह शालिग्राम कैसे खा लेगा!

इसीलिए, यदि राष्ट्रीय या हिन्दू हित की सच्ची चिन्ता हो, तो हिन्दुओं को अपनी शिक्षा और अपने

मंदिर संचालन में दूसरों के समान अधिकार देना सब से पहला काम है। यह करना सरल भी है। क्योंकि इस में मुसलमानों का कुछ नहीं छिनेगा। केवल हिन्दुओं को भी वह मिलेगा जो अन्य को मिले हुए हैं।

अत: यह सार्थक ही नहीं, आसान काम भी है। केवल संसद में एक प्रस्ताव पास करना कि, "संपूर्ण भारत में सभी धर्म के नागरिकों को, बिना भेद-भाव के, अपने-अपने शिक्षा संस्थान, तथा अपने-अपने धर्म/पूजा स्थलों के संचालन का समान अधिकार दिया जाता है" इसे सामुदायिक समानता के नाम पर अधिकांश दलों का समर्थन मिलेगा। अंतर्राष्ट्रीय जगत में भी इसे सहज स्वीकार किया जाएगा। कौन कहेगा कि धर्म-रिलीजन के आधार पर शिक्षा-संस्थान और धर्म-स्थानों के संचालन में भेद-भाव होना चाहिए ?

इसीलिए, भाजपा-परिवार को चुनाव जीतते रहने के सिवा सचमुच राष्ट्रीय या हिन्दू-हित का कोई असली काम करना हो तो देश भर में जिन मंदिरों को सरकारों ने कब्जे में लिया हुआ है, वह हिन्दू समाज को वापस करे। साथ ही, शिक्षा का अधिकार (आर.टी.ई.) कानून भी बिना धार्मिक भेद-भाव के सभी के लिए समान रूप से लागू करे। अर्थात् मुसलमानों, क्रिश्चियनों द्वारा संचालित स्कूलों, शिक्षा संस्थाओं को जो छूट दी गई, वह हिन्दुओं द्वारा संचालित स्कूलों, शिक्षा संस्थाओं को भी हो।

यह दो काम कर देने से मुसलमानों, क्रिश्चियनों की कोई हानि नहीं होगी। केवल हिन्दुओं को हो रही हानि खत्म हो जाएगी। यदि भाजपा नेतागण यह नहीं करते, तो मानना होगा कि वे अपने प्रपंचों से केवल हिन्दू-समाज को दिनो-दिन कमजोर और दुनिया में बदनाम भी कर रहे हैं।

वैसे, यह काम बहुत पहले हो सकता था। स्वयं एक वरिष्ठ मुस्लिम नेता सैयद शहाबुद्दीन ने लोक सभा में अप्रैल 1995 में कुछ वैसा ही विधेयक (नं 36/1995) रखा था। उन का उद्देश्य जो भी रहा हो, परन्तु उन्होंने साफ-साफ प्रस्तावित किया था कि संविधान के अनु. 30 में जहाँ-जहाँ 'सभी अल्पसंख्यक' लिखा हुआ था, उसे बदल कर 'भारतीय नागरिकों का कोई भी वर्ग' कर दिया जाए। जिस से सब को अपनी शैक्षिक संस्थाएं बनाने, चलाने का समान अधिकार मिले। शहाबुद्दीन ने अपने विधेयक के उद्देश्य में लिखा था कि अनु. 30 केवल अल्पसंख्यकों पर लागू किया जाता है, जबकि "एक विशाल और विविधता भरे समाज में लगभग सभी समूह जिन की पहचान धर्म, संप्रदाय, फिरका, भाषा, और बोली किसी आधार पर हो, व्यवहारत: कहीं न कहीं अल्पसंख्यक ही होते हैं, चाहे किसी खास स्तर पर वह बहुसंख्यक क्यों न हों। आज विश्व में सांस्कृतिक पहचान के उभार के दौर में हर समूह अपनी पहचान के प्रति समान रूप से चिंतित है और अपनी पसंद की शैक्षिक संस्था बनाने की सुविधा चाहता है। ... इसीलिए, उचित होगा कि संविधान के अनु. 30 के दायरे में देश के सभी समुदाय और हिस्से सम्मिलित किये जाएं।" वह मात्र एक पृष्ठ का, किन्तु अत्यंत मूल्यवान विधेयक था।

यदि वही विधेयक हू-ब-हू फिर लाकर पास कर दिया जाए, तो राष्ट्रीय हित के लिए एक बड़ा काम हो जाएगा। उस की तुलना में हिन्दुओं के लिए महत्वहीन 'समान नागरिक संहिता' को आज उठाना केवल सांप्रदायिक तनाव उभारने का नुस्खा है। उस से किन्हीं दलों को चुनावी लाभ-हानि भले हो जाए, देश-हित घूरे पर ही पड़ा रहेगा।

यह भाजपा-परिवार की अचेतावस्था का प्रमाण है कि शहाबुद्दीन का विधेयक यूँ ही पड़ा-पड़ा खत्म हो गया, जिसे तब सब से प्रखर मुस्लिम नेता ने पेश किया था। उसे पारित करने से यहाँ अल्पसंख्यक

तुष्टीकरण की जड़ कमजोर होती। क्योंकि संविधान के अनुच्छेद 25-31 की अर्थ-विकृति करके ही हिन्दुओं को दूसरों के समान शैक्षिक, सांस्कृतिक अधिकारों से वंचित किया गया। जबकि संविधान सभा के मिनट्स साफ दिखाते हैं कि संविधान-निर्माताओं की चिंता किसी अल्पसंख्यक के अपने सांस्कृतिक, शैक्षिक अधिकार से वंचित न रहने की थी। लेकिन बाद में, हिन्दू नेताओं के सोए रहने के कारण, हिन्दू-विरोधियों ने उस का धीरे-धीरे यह अर्थ कर डाला कि वह अधिकार तो केवल अल्पसंख्यकों को है! इस तरह, अल्पसंख्यकों को विशेषाधिकार प्राप्त बताकर हिन्दुओं को दूसरे दर्जे के नागरिक बना दिया गया।

वह प्रक्रिया गत पचासेक वर्ष से चल रही है, जिस पर सभी दल वोट-बैंक लोभवश चुप हैं। कैसी विडंबना कि हिन्दुओं को जो कानूनी वंचना ब्रिटिश राज में भी नहीं थी, वह स्वतंत्र भारत में कर डाली गई! देसी नेताओं द्वारा। इस पाप में सभी दल मुखर, मौन, या सुसुप्त शामिल थे। आश्चर्य से अधिक यह लज्जा की बात है।

बल्कि फिर 1995 में सैयद शहाबुद्दीन द्वारा दिए गए महत्वपूर्ण अवसर को हिन्दू नेताओं द्वारा गँवा देना उसी का प्रमाण है। जबकि एकाधिक बार सुप्रीम कोर्ट ने भी कहा है कि संविधान के अनु. 25-26 मुसलमानों, क्रिश्चियनों को जो अधिकार देते हैं, उस से हिन्दुओं को वंचित नहीं करते। उस ने 'रत्तीलाल पनाचंद गाँधी बनाम बंबई राज्य' (1952) मुकदमे में फैसला दिया था कि किसी धार्मिक संस्था के संचालन का अधिकार उसी धर्म-संप्रदाय के व्यक्तियों का है। उन से छीन कर किसी सेक्यूलर प्राधिकरण को देना उस संवैधानिक अधिकार का उल्लंघन है, जो सब को दिया गया था। फिर, 'पन्नालाल बंसीलाल पित्ती बनाम आंध्र प्रदेश राज्य' (1996) मामले में भी कोर्ट ने वही दुहराया।

अत: शिक्षा और मंदिर संचालन में हिन्दुओं को समान नागरिक अधिकार देना ही सार्थक और सर्वाधिक आवश्यक काम है। यह आसान और देश-हित की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण भी है। इस से सांप्रदायिक राजनीति कमजोर होगी और लोगों में सदभाव बढ़ेगा। केवल विशेष समुदाय को वित्तीय सहायता, केवल हिन्दू मंदिरों पर सरकारी कब्जा, और हिन्दुओं द्वारा चलाए जा रहे स्कूल-कॉलेज चलाने पर वित्तीय भेद-भाव खत्म हों। समान शैक्षिक-सांस्कृतिक अधिकार से सामाजिक संतुलन बनेगा, जो अन्य समस्याओ को सुलझाने में भी सहायक होगा। अन्यथा भारत में ही हिन्दू दूसरे दर्जे के नागरिक बने अभिशप्त रहेंगे।

साभार-https://www.indiaspeaksdaily.com/ से